।। ओ३म् ।।

प्रभु से विनय

हे 'शन्नो'। तू देवी है तू हमारे कण्ठ में विराजमान हो। मुनिवरो! वह शन्नो हमारे कण्ठ में विराजमान हो जाती है। इसके पश्चात् आता है, चक्षुः चक्षुः। आगे प्रत्येक इन्द्रिय के लिए प्रभु से याचना करते हैं कि हे प्रभु हमारे चक्षुओं को पवित्र बना और कैसा बना कि हमारे द्वारा पाप दृष्टि न हो। यदि हमारे चक्षुओं में पापाचार की दृष्टि आ गई तो वास्तव में हम पापी बन जाएंगे और एक समय वह आएगा कि वह पाप-दृष्टि हमारा मूल बन करके हमारा विनाश कर देगी।

हे विधाता! हमारे जो श्रोत्र हैं यह आपकी वार्ता को स्वीकार करते रहें। दूसरों की निन्दा को स्वीकार न करें। ये आज गुणों को धारण करने वाले बनें। दूसरों की वार्ताओं को श्रवण करें। इसी प्रकार मुनिवरो! हमारे जो हस्त हैं यह आपके अर्पण हैं विधाता! इन्हें पवित्र करो। भुजा हमारे पवित्र हों। 'यशोबलम्' पवित्र हों। यह कैसे पवित्र बनेंगे? जब प्रभु का गुणगान गाएंगे और इन सबको प्रभु के अर्पण कर देंगे। हम श्रद्धालु बन करके उस प्रभु का अनुकरण करते हैं तो वास्तव में हमारे भुजा विधाता से कहा करते हैं कि हे विधाता! यशोबलम्। यह किसी प्रकार भी ऐसा कार्य न करें कि किसी निरपराधी को दण्ड दें। यदि निरपराधी को दण्ड देंगे तो विधाता हमारा विनाश हो जाएगा। द्वितीय आकर हमारे पर आक्रमण करेगा। आज हम यह चाहते हैं कि हमारे भुजा पवित्र कार्य करें। आज जब हम निरपराधी की रक्षा करेंगे तो वास्तव में कल्याण होगा। हे देव! कल्याण के करने हारे! तू आ और हे भगवन्! हम तेरे अर्पण हैं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अँक : 511 समग्र अँक : 586
वर्ष : 43 समग्र वर्ष : 49

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2.	अनुक्रम		4
3.	प्रकाश का स्रोत	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-19
4.	प्राणायाम का महत्त्व (II)	पूज्यपाद-गुरुदेव	20-31
5.	माता मदालसा द्वारा वनों में पुत्रों की परीक्षा	पूज्यपाद-गुरुदेव	32-37
6.	ऋषियों के उद्‌गार	पूज्यपाद-गुरुदेव	38
7.	दान, पुस्तकों की सूची, प्राप्ति के स्थान व सूचना आदि		39-42

सूचना

सभी आजीवन/वार्षिक सदस्यों को यौगिक प्रवचन मासिक पत्रिका भेजी जा रही है। पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी भी सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में हमें एक सप्ताह के बाद अपनी सदस्य संख्या और दूरभाष नं. सहित निम्न पते पर लिखें या सूचित करें। सूचना मिलने पर पत्रिका पुनः प्रेषित करेंगे।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, ए-59, पंचशील एन्क्लेव,
नई दिल्ली-110017, दूरभाष-011-41030481

शृङ्गीऋषि बेवसाईट
Website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

।। ओ३म् ।।

प्रकाश का स्रोत

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमा बद्ध कर सके। वह सीमा से रहित हैं और सीमा में आने वाले नहीं हैं। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसका सदैव गुणगान गाते रहते हैं। क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। तो मानव अपने में गान गा रहा है और नाना प्रकार का जो गान गाता है तो उस गान में जो स्वर संगम होता है वह उस परमपिता परमात्मा की महती है और उसकी महानता का वह स्रोत कहा जाता है। तो जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही अपने में प्रायः अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि वह परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है उस ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा में हम सदैव रत्त हो जाएं।

विष्णु की मीमांसा

आओ मुनिवरो! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना, विशेष वार्ता प्रायः प्रगट करने नहीं आया हूँ, केवल तुम्हें परिचय देना चाहता हूँ। आज के हमारे वेद के मन्त्रों में एक मन्त्र आ रहा था विष्णु ब्रह्मणा व्रतम् देवाम् आत्मा। तो मुनिवरो! वह परमपिता परमात्मा विष्णु है जो संसार का पालक है, नियामक है और जो पालना करने वाला है, प्रकाश में रत्त रहने वाला है। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसको आत्माम् भूतम ब्रह्मणां वह जो आत्मा है उस अमृते विष्णु के रूप में सदैव वर्णित रही है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द आते रहे हैं। जैसे विष्णु शब्द है—विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का वाची है और विष्णु नाम माता का है और विष्णु नाम आत्मा का है और विष्णु नाम सूर्य को कहा जाता है। जब महर्षि यास्काचार्य से यह प्रश्न किया गया क्या महाराज इतने नामों का पर्यायवाची का क्या अभिप्रायः है तो ऋषि ने उत्तर देते हुए कहा पालनाम पालमव्रत देवत्वाय्! वेद की एक आख्यिका का वर्णन करते हुए कहा क्या जहाँ भी पालना का मूलक आता है वहीं विष्णु शब्द आता है। क्योंकि विष्णु पालना के मूल में विद्यमान रहता है और जब पालना का रहस्य समाप्त हो जाता है तो विष्णु की प्रतिभा भी नष्ट हो जाती है। तो विचार आता है कि जहाँ भी पालना करने वाला वह प्रभु है वहीं पालना करने वाली मेरी प्यारी माँ है और जहाँ माता का नाम पालक है वहीं आत्मा का नाम पालक है और जहाँ आत्मा का नाम पालक है वहीं सूर्य का वाची शब्द है। और मुनिवरो! देखो इसी प्रकार जहाँ भी पालना का प्रसंग है वहीं विष्णु शब्द का प्रतिपादन होता रहा है। तो आओ मुनिवरो! देखो यहाँ प्राणों का नाम भी विष्णु कहा गया है क्योंकि प्राण चले जाते हैं तो मानव क्रियाशून्य हो जाता है। आत्मा इस शरीर से निकल जाता है तो चेतना से शून्य हो जाता है। तो इसीलिए मानो देखो इसको आत्मम् ब्रह्मणे विष्णु ब्रहा यह विष्णु शब्द से सम्बोधित किया जाता है।

आओ मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा न देता हुआ केवल विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का जो पालन करने वाला है। हमारे यहाँ ब्रह्मणं विष्णु वर्णनम् देवत्वाऽम्। मेरे प्यारे! देखो हे विष्णु तू कल्याणकारी है और पालन करने वाला है। मेरे प्यारे! जैसे वृक्ष पे नाना प्रकार के जब फल आ जाते हैं वह नीचे को नमन् करने लगता है। तो नमन् करके ही मानव पालन करता है। इसी प्रकार परमपिता परमात्मा को कहा गया है ध्रुवाम् विष्णु ब्रह्मणां लोकाम्। क्या वह जो विष्णु है वह ध्रुवा में गमन करने वाला है—ध्रुवाम् भूतम् ब्रह्मा ध्रुवाः वह ध्रुवा में रहता है। जैसे वृक्ष पे मानो फल आने के पश्चात्, उसकी सम्पदा आने के पश्चात् वह नीचे को नमन् करता है इसी प्रकार देखो माता का वाची शब्द है। माता जब पालन करती है तो नम्र हो करके और सतोगुण में रमण करती उसका पालन करती है और लोरियों का पान कराती कहती है बुद्धयाम्, शुद्धयाम् भवि अवर्णते। इस प्रकार वेदमंत्रों का उद्गीत गाती हुई वह मानो अपने बाल्य का पालन करते हुए कहती है हे आत्मा तू बुद्धिमान है, तू शुद्ध है, तू अखण्ड रहने वाली चेतना है, मानो तू अमृत है। इस प्रकार माता जब लोरियों का पान कराती है तो पालन में उसे रत्त कराती रहती है। परन्तु देखो जब अनुशासन में प्रवेश करती रहती है तो मानो उसे अनुशासित बना देती है और जब वह पालनम् ब्रव्हा जब वह उत्पत्ति के मूल में रहती है तो वहाँ तमोगुण की प्रवृत्ति में भी मानो देखो वहाँ एक रहस्यतम है। तो इसी प्रकार आत्मम् भूतम् ब्रह्मे माता का नाम भी बेटा! देखो विष्णु कहा गया है। जो पालन करने वाला है उसका नाम विष्णु है। तो वह कल्याणकारी है, कल्याण करने वाला है।

अक्षय-क्षीर सागर में विष्णु

मेरे प्यारे देखो! आत्माम् भूतम् ब्रह्मा लोकाम् अव्रतम देवाः ऐसा हमारे यहाँ वेद के आचार्यों ने वर्णन करते हुए कहा क्या विष्णु तो अक्षयक्षीर सागर में रहते हैं। और अक्षयक्षीर सागर में मानो नारद अपनी वीणा को ले करके वह ध्वनि करता है और अमृतम् मानो देखो वह

अव्रेतम गन्धर्वः गान गाने लगता है और लक्ष्मी चरणों में ओतप्रोत हो जाती है। वह अक्षयक्षीर सागर में मानो शेषनाग की शय्या पर विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! जब महर्षि यास्काचार्य ने इस रहस्य का उद्घाटन किया तो उन्होंने कहा क्या असुतम देवत्वाम् विवेकाम् भूतम् ब्रह्मा मानो जब यह आत्मा विवेक में परणित होता है तो **यह आत्मा का नाम विष्णु है,** यह अक्षयक्षीर सागर में रहता है। जब यह मानव साधक बनता है और साधना करने लगता है तो साधना के मूल में जब प्रवेश करता है तो बेटा! देखो अक्षयक्षीर सागर में पहुँच जाता है। **अक्षयक्षीर सागर नाम कहते हैं जो ज्ञान का मार्ग है अथवा ज्ञान का सागर है जहाँ विवेक से कटिबद्ध होने वाला ज्ञान है उसी में ओतप्रोत हो जाता है।** तो मेरे पुत्रो! देखो जब यह आत्माम् भूतम् विष्णु जब यह आत्मा मुनिवरो! देखो विष्णु बन करके अक्षयक्षीर सागर में रहता है तो उस समय **नारद नाम का जो मन** है यह भी अपनी चंचल रूपी वीणा को ले करके उनके समीप आ जाता है—हे प्रभु मैं अपनी चंचलता को त्याग रहा हूँ समिताम् भूतम् मैं आपके समीप आना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! **गन्धर्वः नाम बुद्धि का है** जो नाना प्रकार के भेदों वाली है। बुद्धि भी मानो अपना गान गाने लगती है और स्वर ध्वनि में गान गाती है कहीं जटा पाठ, धन पाठ, माला पाठ नाना प्रकार के गानों से यह मानो अपने को सुशोभित करती रही है और अपने में अपने को जानने में तत्पर रही है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो यहाँ अमृतम् देवः लक्ष्मी चरणों में ओतप्रोत रहती है। **लक्ष्मी नाम मेरे प्यारे! जो संसार का लुभाने वाली है।** जो दृष्टिपात आने वाला जगत् है इसमें नाना प्रकार का जो चमत्कार है नाना प्रकार से जो संसार को यह मोहने वाली है। यह भी मुनिवरो! देखो अपने-अपने में उसके चरणों में ओतप्रोत हो जाती है और मुनिवरों! शेषनाग की शय्या पर विष्णु विद्यमान हैं। शेषनाग कहते हैं बेटा! जो पंच फणों वाला शेष नाग है। मेरे प्यारे! काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह वाला जो यह शेष नाग है इसके ऊपर आत्मा विश्राम करने लगता है और यह अक्षय-क्षीर सागर में बेटा!

विश्राम को प्राप्त हो जाता है। विचारवेत्ताओं ने कहा है कि उस समय यह आत्मा विवेकाम् भूतम् मानो देखो यह ब्रह्माण्ड को अपने को देखो ब्रह्माण्ड को अपने नीचे दबा करके उसमें ओतप्रोत हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह में यह सर्वत्र विभाजन क्रिया निहित है। जब यह इसमें ओतप्रोत हो जाता है तो इसके ऊपर नीचे तो विचार विनिमय क्या मुनिवरो! देखो जब यौगिक आत्मा विष्णु बन करके, विवेकी बन करके मेरे प्यारे! काम, क्रोध, मद, लोभ मोह वाले शेष नाग को नीचे दबा कर लेता है तो अमृतम् यह विष्णु बन जाता है। तो यहाँ आत्मा का नाम विष्णु माना गया है। आज मेरे प्यारे! मैं यौगिक प्रतिक्रियाओं में नहीं जाना चाहता हूँ केवल यह कि हमारे यहाँ यह जो आत्मा है इसको जानने की आवश्यकता है क्योंकि आत्मा इस पंचमहाभूतों के लोक में विद्यमान रहती है। मुनिवरो! देखो यह जो हमारा शरीर है यह पंच महाभूत है और इसी में रहने वाला आत्मा है। जब मुनिवरों! देखो आत्मा इस शरीर से निकल जाता है, सुत हो जाता है।

राजा जनक और पत्नि रम्भेश्वरी का चिन्तन

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें राजा जनक के यहाँ ले जाना चाहता हूँ जहाँ मुनिवरो! देखो पति और पत्नी दोनों परस्पर अपनी विचार धारा प्रगट करते रहे हैं। एक समय बेटा! देखो सायँकाल का समय था। सायँकाल समय में महर्षि यास्काचार्य अमृतम् ब्रह्मे देखो महात्मा अर्द्धभाग वह भ्रमण करते बेटा! देखो राजा जनक के गृह में उन्होंने प्रवेश किया। सायँकाल का समय था राजा जनक की पत्नी रम्भेश्वरी अपने मानो अपने कक्ष गृह में विश्राम को प्राप्त होने वाली थी। परन्तु उन्होंने वेदमन्त्रों का उद्गीत गाया और देखो जब अर्द्धभाग जी ने वेदमन्त्रों का उद्गीत गाया तो वह निन्द्रा में तल्लीन हो गये परन्तु ऋषि-मुनि अपने स्थान को उन्होंने गमन किया। गमन करने के पश्चात् अमृताम् वह तो अमृता को प्राप्त हो गये। परन्तु देखो वह देवी रम्भेश्वरी मुनिवरो! देखो जब रात्रि के मध्यकाल में जब निन्द्रा से जागरूक हुई तो वेदमन्त्र उन्हें स्मरण आने लगे और वेदमन्त्रों में उच्चारण कर दिया

जा रहा था प्रकाशाम् भूतम् ब्रह्मे प्रकाशाम् दिव्याम् देवत्वाम् ब्रहुवसुते देवम् अस्सुतम् सूर्याणी गच्छतम् देवत्वाम् चन्द्रो वसुतो देवाः। ऐसा वेद का मन्त्र जब वह उद्गीत रूप में गाने लगी तो अपने में विचारने लगी की वेदमन्त्र यह प्रश्न कर रहा है क्या कौन प्रकाश का द्युतक है संसार में, कौन प्रकाश के देने वाला है?

मेरे प्यारे! देखो इसी विचार को ले करके अपने में कोई निपटारा नहीं कर सकी। जब निपटारा नहीं हो सका तो देखो रम्भेश्वरी ने विचारा क्या रात्रि का अन्तिम चरण रह गया है मैं अपने स्वामी के द्वारा चलूं और उनसे यह मानो दोनों परस्पर अपने विचार-विनिमय करेंगे। मेरे प्यारे! देखो जब अन्तिम रात्रि का चरण रहा तो देवी रम्भेश्वरी ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते राजा जनक के कक्ष में पहुँची। राजा जनक जागरूक हो करके बोले देवी इस रात्रि के अन्तिम चरण में तुम्हारे आने का अभिप्रायः? उन्होंने कहा प्रकाशाम् भूतम् प्रकाशाम् नेत्राणी गच्छतम् प्रव्हा लोकाम्। हे प्रभु! यह वेदमन्त्र मुझे बारम्बार स्मरण आ रहे हैं और वेदमन्त्र यह प्रश्न कर रहा है कि कौन नेत्रों का द्युतक है, कौन नेत्रों को मानो देखो प्रकाश देने वाला है? मैं उस प्रकाश के लिए ललायित हूँ भगवन्! राजा जनक ने कहा तो आओ, विराजो। तो दोनों परस्पर विचार विनिमय करने लगे। उन्होंने कहीं सूर्य को अपना प्रकाशक स्वीकार किया, कहीं उन्होंने चन्द्रमा को अपना प्रकाशक स्वीकार किया परन्तु इसी विचारधारा में उन्हें बेटा! देखो रात्रि समाप्त हो गई और दिवस मानो सूर्य उदय होने लगे। मेरे प्यारे! अपने में दोनों कोई निपटारा नहीं कर सके। उन्होंने कहा देवी अब प्रातः काल हो गया, सूर्य उदय हो गया है। यह विष्णु है, प्रकाशक है। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने अपने-अपने आसन को त्याग करके अपनी क्रियाओं से निवृत्त हुई।

राजा जनक के यहाँ अग्निहोत्र

राजा जनक के यहाँ जहाँ ब्रह्मयाग होता रहता था वहाँ मानो

देवयाग की भी प्रतिभा का वर्णन प्रायः देखो उनके हृदयों में होता रहता। तो मुनिवरो! देखो राजा जनक और रम्भेश्वरी अपनी क्रियाओं से प्रातःकाल की निवृत होकर के मुनिवरो! देखो अपनी यज्ञशाला में पहुँचे जहाँ प्रातःकालीन नाना ब्रह्मवेत्ता एक पंक्तियों में विद्यमान हैं और वह स्वयं अग्नि को प्रचण्ड करके ब्रह्मवेत्ता देखो, अग्नि-होत्र करते। तो मुनिवरो! मुझे स्मरण आता रहता है क्या वह दोनों जब उस यज्ञशाला में पहुँचे तो सबसे ऊर्ध्वा आसन पर याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यमान हैं और मुनिवरो! देखो महात्मा अर्द्धभाग हैं, महात्मा दिग्ध, महात्मा अश्वल और भी मुनिवरो! देखो चाक्राणी गार्गी और स्वेधधन्नतः ऋषि महाराज और भी जैसे महर्षि अश्वेत ऋषि और ब्रह्मचारी कवन्धि और ब्रह्मचारी सुकेता भी विद्यमान हैं। तो बेटा! देखो जब वह अपने आसन पर पहुँचे तो वह उन्होंने अपने में संकल्प कर लिया कि हम बिना आज्ञा के आज आचार्य से कोई प्रश्न नहीं करेंगे। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने अग्नि को प्रचण्ड किया अग्नि में साकल्य की आहुति दी और साकल्य दे करके उन्होंने जब अग्निहोत्र उनका समाप्त हुआ।

नेत्रों का प्रकाशक

मेरे प्यारे! देखो जैसे समाप्त इतने में महात्मा याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि यजमान मेरे से कोई प्रश्न कर सकता है। तो उन्होंने, यजमान ने—राजा जनक और उनकी पत्नी ने नतमस्तिष्क होकर के कहा हे प्रभु! आज हम प्रातःकालीन एक वेदमन्त्र के ऊपर विचार विनिमय कर रहे थे और वेदमन्त्र कह रहा था प्रकाशाम् भूतम् प्रकाशम् देवत्वाम् लोकाः! हे प्रभु! देखो हम यह जानना चाहते हैं क्या हमारे जो नेत्र हैं वह किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? तो मुनिवरो! देखो राजा जनक और उनकी पत्नी के प्रश्न करने के पश्चात् राजा जनक राजम् ब्रह्मा देवत्वाम् उस समय ऋषि ने कहा राजन् हमारे जो नेत्र हैं वह सूर्य के प्रकाश में प्रकाशित होते हैं। मानो प्रातः काल सूर्य उदय हो जाता है और वह उदय-भानु जब उदय होता है तो मानो वह प्रकाश

देता चला जाता है। नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपाता है, अन्नाद को तपाता है और मा अमृते मानो देखो नेत्र माता अपने पुत्रो को जागरूक कर लेती है और कहती है हे बाल्य आओ सूर्य उदय हो गया, प्रकाशक आ गया है। मानो देखो आचार्यजन ब्रह्मचारियों को जागरूक कर देते हैं हे ब्रह्मचारी आओ सूर्य उदय हो गया अपने कक्ष को त्यागो। तो मानो देखो इस प्रकार यह **सूर्य हमारे नेत्रों का प्रकाशक है।** यह सूर्य प्रकाश के देने वाला है और यह प्रकाश में ही रत्त रहने वाला है। मेरे प्यारे! जब प्रकाश की वार्ता आई उन्होंने कहा आईए प्रातः काल में उषा और कान्ति किरण दोनों मानो प्रकाश को देती चली जाती हैं प्रकाश को अपने गर्भ में धारण कर लेती हैं उस समय मानो देखो सूर्य को इन्द्र के नामों से सम्बोधित किया जाता है। यह इन्द्र बन करके ही मुनिवरो! देखो रात्रि को अपने में धारण कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो यह सहस्राणी किरणाम् भूतम् यह सहस्रों किरणों को ले करके संसार को प्रकाशमान मानो देखो पृथ्वी गमन और द्यौ और देखो अन्तरिक्ष तीनों में यह छायामान हो जाता है और नाना प्रकार की वनस्पतियों को यह प्रकाश देता है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा हे दिव्याम्, हे राजन् यह **सूर्य हमारे नेत्रों का देवता है,** यह देवत्व को प्राप्त कराता है, हमारे जीवन को प्रकाश में ले जाता है।

मेरे प्यारे! देखो अमृतम् ब्रह्मा और यही मुनिवरो! देखो गौ नाम का जो पशु है इसके रीढ़ के भाग में एक नाड़ी कहलाती है जिस नाड़ी का नाम सूर्यकेतु नाम की नाड़ी है। इसके निचरले भाग में एक मानो देखो स्वर्ण के परमाणुओं को ग्रहण करने वाली सूर्यकेतु नाम की नाड़ी देखो उन परमाणुओं को अपने में ग्रहण करती है इसीलिए गौ का जो धृत है उसमें पीत वर्ण है मानो देखो वह अमृतम् उसमें स्वर्ण की मात्रा कहलाती है।

चन्द्रमा का प्रकाश

मुनिवरो! देखो जब इस प्रकार ऋषि ने वर्णन किया तो वह दोनों

रम्भेश्वरी ने प्रश्न किया कि हे प्रभु मैं यह जानना चाहती हूँ जब यह सूर्य नहीं होता तो उस समय हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? क्योंकि यह जो सूर्य है यह तो प्रकाश देता रहता है परन्तु यह न हो रात्रि छा जाती है प्रकाश में रत्त रहना चाहते हैं, नेत्र तो किसके प्रकाश से प्रकाशमान? उन्होंने कहा हे दिव्या जब मानो देखो सूर्य नहीं होता तो चन्द्रमा के प्रकाश से हम प्रकाशमान होते हैं। यह चन्द्रमा हमारे नेत्रों का द्युतक है। चन्द्रमा का समन्वय देखो समुद्रों से होता है। समुद्रों से जलों का उत्थान करता है और यह जल ही मानो देखो वृष्टि के मूल में रहता है, वह मानो देखो पृथ्वी के अमृत को अमृत की वृष्टि करता है उससे अन्नाद का जन्म होता है। मानो यह चन्द्रमा हमारे अमृत को ग्रहण कराता है।

जब माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशु विद्यमान होते हैं तो माता की रसना के निचले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है और उस नाड़ी का समन्वय पुरातत नाम की नाड़ी से होता है और पुरातत नाम की नाड़ी का समन्वय मानो माता की लोरियों से होता है। वहाँ से पंचम नाड़ी बन करके चलती है और उसका समन्वय माता की और बाल्य की नाभि का, दोनों का एक समन्वय होकर के उसे अमृत प्रदान करता रहता है। यह चन्द्रमा अमृत के देने वाला है, नाना प्रकार की औषधियों का रस देता है यह सोम कहलाता है। तो ये प्रकाश का द्युतक है मानो देखो जब सूर्य नहीं होता तो चन्द्रमा हमें प्रकाश देता है।

तारामण्डलों का प्रकाश

मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो राजा और उनकी पत्नी ने कहा प्रभु हम जानना चाहते हैं जब यह चन्द्रमा नहीं होता तो प्रकाश का द्युतक कौन है? उन्होंने कहा जब चन्द्रमा नहीं होता तो हमें प्रकाश के देने वाले ये नाना प्रकार के तारा मण्डल हैं। अन्धकार छाया हुआ है तारामण्डलों का धीमा-धीमा प्रकाश आ

रहा है और वह प्रकाश में ही मानो देखो मानव अपनी पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है। यही प्रकाश तारा मण्डलों का प्रकाश है जिस प्रकाश में मानव रत्त हो करके अपने को प्रकाशक स्वीकार करता है और अपनी मानो देखो उस पगडण्डी को ग्रहण करता है जिस मानो देखो पगडण्डी पे उसे जाना है। तो विचारवेत्ता कहते हैं यही तो तारामण्डलों का धीमा-धीमा प्रकाश आ रहा है और उसी के प्रकाश से हमारे नेत्र प्रकाशमान हो जाते हैं। परन्तु देखो प्रभु ने कैसी माला बनाई है बेटा! एक दूसरे में मानो लोक-लोकान्तर एक दूसरे में मण्डल पिरोया हुआ है। यह नाना पृथ्वी बेटा! देखो सूर्य में पिरोई हुई हैं, सूर्य बृहस्पति में पिरोया हुआ है और बृहस्पति आरूणी मण्डल में पिरोया हुआ है और आरूणी मण्डल ध्रुव में पिरोया हुआ है और ध्रुव मुनिवरो! देखो स्वाति में पिरोया हुआ है। स्वाति मुनिवरो! देखो अमृतम् पुष्प नक्षत्र में पिरोया हुआ है। इसी प्रकार एक दूसरा मण्डल बेटा! एक दूसरे में पिरोया हुआ है। जैसे माता का पुत्र माता में पिरोया हुआ है इसी प्रकार मुनिवरो! यह जगत् एक दूसरे में पिरोया हुआ सा हमें प्रायः दृष्टिपात आता रहता है। यह मानो देखो परमपिता परमात्मा का जो अमूल्य जगत् है यह नाना ब्रह्माण्ड वाला एक ब्रह्माण्ड एक दूसरे में पिरोया हुआ है। एक आकाश गंगा दूसरी आकाश गंगा में पिरोई हुई है, एक निहारिका दूसरी निहारिका में पिराई हुई है। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता है। आज जब मैं तेरे ब्रह्माण्ड का बखान करने लगता हूँ, वेदमन्त्रों की विवेचना करने लगता हूँ तो तेरा अनन्तमयी ब्रह्माण्ड हमारे समीप आ जाता है। एक दूसरा ब्रह्माण्ड मानो एक दूसरे में समाहित हो रहा है इतना विशाल यह जगत् है जिसके ऊपर बेटा! विचार करके विचारवेत्ता अन्त में नेति कह करके मौन हो जाते हैं। तो मेरे पुत्रो! देखो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे राजन् हम मानो देखो जब चन्द्रमा नहीं होता तो तारामण्डलों के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं और तारामण्डलों का जो प्रकाश है वह बड़ा अनन्तमयी माना गया है।

अग्नि का प्रकाश

परन्तु राजा जनक और उनकी पत्नी ने कहा प्रभु ऐसा हो जाए क्या इस पे मेघों का आवरण छा जाए और अन्धकार हो जाए तो प्रभु जब यह तारामण्डल नहीं होते तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा जब यह तारामण्डल भी नहीं होते तो हम मानो देखो अग्नि के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। यह अग्नि मानो देखो अन्धकार छाया हुआ है मेरी प्यारी माता अपने गृह को अग्नि से प्रकाशित कर लेती है। काष्ठो में रहने वाली अग्नि का समन्वय हो जाता है और वह जब प्रकाश हो जाता है तो मानव उसमें कार्यरत हो जाता है, अपने-अपने क्रियाकलापों में रत्त हो जाता है। मेरे प्यारे! इस अग्नि के सम्बन्ध में आचार्यों ने अपनी बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं। मानो देखो अग्नि को कहीं गार्हपत्य नाम की अग्नि को माना है जिसमें ब्रह्मचारी तपता है। एक अग्नि मानो देखो गृहपत्य नाम की अग्नि है जिसमें में पति और पत्नी गृह में तपते हैं। एक वैश्वानर नाम की अग्नि होती है जिसमें वानप्रस्थ तपता रहता है। एक अग्नि आवहनीय नाम की अग्नि है जिसमें बेटा! देखो ब्रह्मज्ञानी तपता रहता है।

विचार आता है बेटा! यह अग्नि ब्रह्मवेत्ताओं की अग्नि मानी गई है परन्तु जब यही अग्नि आयुर्वेदाचार्यों के गृहों में प्रवेश होती है तो बेटा! देखो उन्होंने पच्चासी प्रकार की अग्नि का चयन किया है। जब यही अग्नि मुनिवरो! देखो वैज्ञानिकों के कुल में पहुँची है तो उन्होंने बेटा! अरबों-खरबों प्रकार की अग्नि का चयन किया है। तो यह अनन्तमयी जो अग्नि है जो अग्नि एक-एक शब्द को अपने ऊपर धारा रूप में रमण कराती हुई वह शब्द को व्यापक बना देती है। मेरे प्यारे! देखो वह तरंगों को व्यापक बना देती है तो यह अग्नि का व्यवधान है, यह अग्नि की प्रतिभा कहलाती है। तो आओ मेरे प्यारे! देखो अग्नाम् भूतम् ब्रह्मा अव्रते देवत्वम् ब्रह्म वाचा। मेरे प्यारे! देखो यह ब्रह्मा अग्नि बन करके हमें प्रकाश देने वाली है और यही अग्नि बेटा! देखो जो गृह में प्रकाश को प्राप्त हो करके मानव अपने क्रियाकलापों में तत्पर

हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो यह अग्नि हमें प्रकाश के देने वाली है। यह प्रकाशक है और यह मानो देखो अणु और परमाणु में अग्नि प्रदीप्त होने वाली है। यही अग्नि है बेटा! शब्द को द्यु में पहुँचा देती है और द्यु का निर्माण करने वाली है, भूतल में रमण करने वाली है। इन तीन ही प्रकार के परमाणुओं को ले करके बेटा! वैज्ञानिक अपने में स्थिर हो जाते हैं।

शब्द का प्रकाश

विचारवेत्ताओं ने जो इस प्रकार वर्णन किया तो बेटा! देखो राजा जनक और उनकी पत्नी बोली कि प्रभु हम विस्तार से नहीं जानना चाहते हैं। हम यह और जानना चाहते हैं जब यह अग्नि नहीं होती तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा जब यह अग्नि नहीं होती तो हम शब्द के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। अन्धकार छाया हुआ है और एक मानव अपने पथ से मानो कुपथ को रमण कर जाता है। वह भयँकर वन में चला गया है, पथ प्राप्त नहीं हो रहा है, वह कहता है अरे! है कोई मार्ग चेताने वाला। उस समय मुनिवरो! देखो एक मानव जो मार्ग में स्थिर है वह कहता है आ जाओ मैं मार्ग में स्थिर हूँ। तो बेटा! उस शब्द के प्रकाश से अपने मार्ग को प्राप्त कर लेता है, अपनी पगडण्डी को प्राप्त कर लेता है वह पथदर्शक बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो इसी वाणी के कारण, शब्द के कारण ही मुनिवरो! पाण्डित्व पाण्डित्व को प्राप्त होता रहता है। वह एक-एक वेदमन्त्र को उद्गीत रूप में गाता है और उसको मुनिवरो! देखो व्याख्या के रूप में वर्णन करता रहता है। नाना प्रकार के मानो मेरे प्यारे! देखो पाण्डित्व में रमण करता है तो वह शब्द के ही कारण देखो पाण्डित्व कहलाता है। एक राजा अपने राज्यसभा से घोषणा कर रहा है परन्तु शब्द के कारण उसका शब्द मान्य हो जाता है। मानो देखो वह शब्द का प्रकाश है तो शब्द के प्रकाश से ही मेरे प्यारे! देखो ध्वनि पर नाना प्रकार की ध्वनियाँ आ रही हैं। जब साधक इस मानो देखो ध्वनि के ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करता है तो अनहाद मेरे प्यारे! देखो उसमें रमण

करता है। मुनिवरो! देखो जब व्याकरण का विद्वान, व्याकरण-वेत्ता जब शब्दों को सजातीय बनाता है और विजातीय शब्दों को निष्कासित कर देता है तो व्याकरण का महान् पाण्डित्व को प्राप्त हो जाता है। तो बेटा! देखो शब्द को अपने में सजातीय बनाया जाता है विजातीय को नष्ट किया जाता है। तो इस प्रकार वेद के ऋषि ने कहा क्या देखो वह जब कुछ नहीं होता तब तुम शब्द के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। यह शब्द को बेटा! देखो ऋषि-मुनि रात्रि के काल में जो संघर्ष होता रहता है परमाणुओं का उसे अपने में ग्रहण करते रहते हैं और जो संघर्ष हमारे यहाँ नाना प्रकार की ध्वनि लघु मस्तिष्क में होती रहती है उससे उसका मिलान करते हैं, अनुभव करते हैं तो बेटा! वह **महान साधक** कहलाते हैं। तो बेटा! देखो इस प्रकार ऋषि ने संक्षिप्त से अपना परिचय दिया और यह कहा कि हमारे यहाँ जो प्रकाश आ रहा है वह नेत्राम् भूतम् ब्रह्मा वर्णस्सुतम मानो देखो वह शब्द का प्रकाश है और शब्द ही हमारा मानो देखो नेत्रों का भी नेत्र है वह प्रकाश के देने वाला है।

आत्मा का प्रकाश

मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार अपना मन्तव्य दिया तो राजा जनक ने अन्त में कहा कि प्रभु यदि शब्द भी न हो तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा हे राजन् यदि शब्द नहीं होता तो हम आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ऋषि ने कहा आत्माम् भूतम् ब्रह्मा आत्माम् लोकाम् विष्णु—यह आत्मा तो शाश्वत विष्णु है मानो जब तक इस शरीर में विद्यमान रहता है मानव को चेतना बनी रहती है। वह चेतनित कहलाता है, प्रकाशक कहलाता है, विज्ञानवेत्ता कहलाता है, दार्शनिक कहलाता है और वही मानो देखो मूर्धा कोटि में गणना में रमण करता रहता है परन्तु वह अमृतम् देखो यदि आत्मा नहीं होगा तो मानव शून्यवत् को प्राप्त हो जाता है। आत्माम् भूतम् ब्रह्मा यह आत्मा ही मानो देखो पंच महाभूतों के लोक में रमण करने वाला है। तो हे राजन् यह आत्मा ही प्रकाश का द्युतक है। जब तक आत्मा

इस शरीर में विद्यमान है जब तक मानव चेतनित बना रहता है, प्रकाश में रत्त होता रहा है। जब यह आत्माम् भूतप प्रव्हा आत्मा जब नहीं रहता तो यह मानव शून्य कोटि को प्राप्त हो जाता है। हे राजन् तुम आत्मा को, आत्मा को ही शाश्वत मानो, चेतना का मूल स्वीकार करें। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा हे राजन् जब यह आत्मा इस शरीर से निकल जाता है अरे! उस समय शब्द अन्तरिक्ष से आ रहा है ध्वनि हो रही है परन्तु आत्मा नहीं है तो देखो वह ध्वनि से वंचित हो जाता है। अग्नि अपना प्रकाश दे रही है जो काष्ठों में रहने वाली है परन्तु आत्मा नहीं है तो मुनिवरो! देखो वह अपने में प्रकाशमान नहीं हो रहा है। मेरे पुत्रो! देखो आत्मा नहीं है अरे! यह तारा मण्डल अपना प्रकाश दे रहे हैं मानो पंक्तियाँ बनीं हुई है अरे! मानव क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते। ऋषि कहता है क्या देखो यह अमृतम् मानो चन्द्रमा अमृत बिखेर रहा है। अरे! अमृत को बिखेरने वाला अमृत बिखेर रहा है परन्तु आत्मा नहीं है, ग्रहण करने वाला शरीर में नहीं है तो देखो अमृत को नहीं प्राप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! सूर्य प्रकाश दे रहा है! अरे! प्रकाशक नहीं है, वह आत्मा नहीं है तो प्रकाश नहीं प्राप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा हे राजन् तुम आत्मा के प्रकाश में प्रकाशित रहो। आत्मा का प्रकाश ही मानो देखो महान प्रकाश है इस प्रकाश के लिए तुम सदैव याचनित रहो और सदैव इसको जानने का प्रयास करो।

मेरे प्यारे! देखो आत्मा को जानने वाला मानव आत्मवेत्ता कहलाता है, आत्मा को जानने वाला ही विष्णु कहलाता है, आत्मा को जानने वाला ब्रह्म कोटि में माना गया है, आत्मा को जानने वाला ही दार्शनिक कहलाता है और वह विज्ञानवेत्ता बन जाता है।

आओ मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा हे राजन् हमारे जो नेत्र हैं या पंच महायाग हो रहा है वह आत्मा के कारण हो रहा है तुम आत्मा को जानने का प्रयास करो। आत्माम् भूताम् ब्रह्मणे आत्मा—हे आत्मा तू महान प्रकाश के देने वाला है। इस प्रकार मुनिवरो! देखो हमें प्रभु की याचना करनी चाहिए और आत्मा को जानना चाहिए क्योंकि आत्मा

विष्णु है अक्षयक्षीर सागर में रहने वाला है। यह आत्मा के कारण ही सब प्रकाश हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो राजा जनक और रम्भेश्वरी ऋषि के चरणों में ओत-प्रोत हो गये और यह कहा कि प्रभु आप को धन्य है। आप ने हमें अन्धकार से प्रकाश में पहुँचाया है आपको धन्य है प्रभु! यह उच्चारण करके बेटा! अन्त में मौन हो गये। मेरे प्यारे! आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः क्या है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा को जानने वाले बने और परमात्मा का जो रचाया हुआ अमूल्य जगत् है इसमें आकर के मानो देखो हम अपने महान क्रियाकलापों को ऊँचा बनाए जिससे हमारा जीवन पवित्र बने और महान बन करके हम संसार सागर से पार हो जाएँ और हम प्रकाशक बन करके प्रकाश को प्राप्त हो जाएँ चाहे वह वेद से प्राप्त हो, चाहे वह आत्मा से प्राप्त हो परन्तु प्रकाशाम् भूतम् ब्रह्मा। मेरे प्यारे! देखो प्रकाश ज्ञानत्वा ज्ञानत्वा यह ज्ञान से ही हमें प्राप्त होता है।

यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः हमारा ये क्या हम मुनिवरो! देखो उस पालक जो हमारा देव है हम उसकी याचना करें और उसकी महिमा को जानते हुए अपने में ही अपने को समाहित करते चले जाएँ। यह है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवाऽम् आभ्याम् स्थामाऽम् प्राची मतम् रेवा आपाऽम्

ओ३म् तनुमा हिरण्य आप्याम् देवाः

ओ३म् यश्सचम ब्रह्मणाः वायांऽयाम्

दिनांक : 6 जुलाई, 1992

स्थान : श्री ओमप्रकाश त्यागी
ग्राम कैन्दकी, सहारनपुर

।। ओ३म् ।।

प्राण का महत्त्व

(II)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन किया जाता है अथवा उसके गुणवादन और उसकी पर्यायवाची आभाओं का प्रायः वर्णन आता रहता है। जब हम यह विचार-विनिमय करने लगते हैं कि परमपिता परमात्मा का जो यह ब्रह्माण्ड है, यह विज्ञानमय स्वरूप माना गया है। प्रत्येक मानव परम्परा से ही अनुसन्धान करता रहा है। मानव के अनुसन्धान की जो परम्परा से शैली रही है वह बड़ी विचित्र रही है। दोनों प्रकार के विज्ञान में रमण करने वाले नाना ब्रह्मवेत्ता हुए जो ब्रह्म की धारा को भी जानते और प्रकृति के परमाणुवाद में भी अपनी उड़ान उड़ते रहे।

वेदों का ज्ञान

आज मैं पुत्रो ! तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि हमारे यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव-कन्या, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि-मण्डल परम्परा से ही दोनों प्रकार का विज्ञान प्रायः उनके मस्तिष्कों में रहा। वेद की नाना प्रकार की आख्यायिकाएँ दोनों प्रकार की धाराओं को जन्म देती रही हैं। तो मेरे पुत्रो ! विचार क्या? हमारे यहाँ, तुम्हें स्मरण होगा; बेटा ! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, कि हमारे यहाँ नाना रूपों की उड़ान उड़ने वाले आकुंचन, प्रसारण, ऊर्ध्वा,

ध्रुवा गति वाले और अपने मनस्तत्त्व पर उसकी विचारधारा, और उसकी धाराओं को अर्पित करने वाले नाना वैज्ञानिक और ब्रह्मनिष्ठ हुए हैं। आज मैं तुम्हें यह उच्चारण विशालता से नहीं केवल परिचय देने के लिए आया हूँ। क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि-मुनि वेदों का अध्ययन करते हुए, वेदों की नाना प्रकार की शाखाओं के ऊपर उनका चलन और उनकी आभाएँ रही हैं।

(1) विज्ञान काण्ड में से कुछ शाखाओं का निकास हुआ (2) कुछ ज्ञान काण्ड में से और (3) कुछ उपासना काण्ड में से। और (4) ब्रह्म-काण्ड में से भी कुछ शाखाओं का निकास हुआ। ऋषि-मुनियों ने अपनी व्याख्याएँ की हैं। और वे जो व्याख्याएँ वह बड़ी विचित्र हैं और परमात्मा के स्वरूप का उन्होंने वर्णन किया है। क्योंकि ब्रह्माण्ड का उन्होंने बेटा ! पिण्ड से इसका समन्वय किया है। क्योंकि जब तक ब्रह्माण्ड का पिण्ड से समन्वय नहीं होगा तब तक मेरे पुत्रो ! हम योगेश्वर नहीं बन सकते। क्योंकि हमारे यहाँ परम्परागतों से जितने भी साधक-जन हुए हैं अथवा तपस्या-चर वाले हुए हैं उन्होंने एक-एक इन्द्रिय के ऊपर अध्ययन किया है और उनको याज्ञिक बना करके बेटा ! याज्ञिकता से उन्होंने इसको दृष्टिपात करके अपनी सीमा में रहे। उन्होंने ब्रह्माण्ड की अनेकता को एकता में परणित करने का प्रयास किया। और एकता को अनेकता में दृष्टिपात भी किया।

मृत्यु की मीमांसा

आओ मेरे पुत्रो ! आज मैं तुम्हें उस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जिस क्षेत्र की चर्चाएँ बेटा ! प्रारम्भ हो रही थीं। जिन चर्चाओं में मृत्यु से पार होने के लिए मानव परम्परा से प्रयास करता रहा है। यह मृत्यु ही तो रूला देती है प्राणी को यह मृत्यु ही थी जो बेटा ! प्रलय रूप में मानो सर्वत्र दृष्टिपात होने वाला पदार्थ मृत्यु के मुख में चला गया है। मृत्यु के कारण ही ये मानव मानो रूदन करता रहता है, कि मेरी मृत्यु नहीं आनी चाहिए। प्रत्येक मानव के हृदयों में आशंका बनी रहती है कि मेरी यदि मृत्यु आ गई तो मेरे इस कुटुम्ब का क्या बनेगा?

मृत्यु आ गई तो जिस ज्ञान और विज्ञान को मैंने प्राप्त किया है यह मेरे से पुनः ओझल हो जायेगा।

मेरे पुत्रो ! मृत्यु से ही मृत्यु को पुकार रहा है। परन्तु यह विचारना भी चाहिए कि मृत्यु क्या पदार्थ है? यह भी तो विचार का विषय है। प्रत्येक मानव को यह विचारना है कि यह मृत्यु क्या है? 1. किन्हीं आचार्यों ने बेटा ! इसको मिलन से बिछुड़न कहा है। 2. किन्हीं आचार्यों ने शरीर के अन्त को ही मृत्यु माना है। परन्तु देखो 3. यहाँ ऋषियों का मन्तव्य यह है कि जिस इन्द्रिय के द्वारा पाप-वस्तुओं ने जिसको छेदन कर दिया वही मृत्यु को प्राप्त हो गया। 4. जिस मानव के द्वारा असुरपना आ गया है, उसके आहार में, उसके व्यवहार में, उसके क्रियाकलाप अर्थात प्रत्येक क्रियाकलाप में वह प्रभु की महिमा को, अपने में अपने को दृष्टिपात न कर सका वह मृत्यु के आंगन में चला गया है। उसे मृत्यु माना है। क्योंकि मृत्यु ही संसार को निगलती रहती है। अन्धकार को निगलती रहती है। संवत्सर के आधार पर यह जीव अक्षत बना हुआ है।

मेरे पुत्रो ! मैं विचार यह देने जा रहा था। श्रोत्रेन्द्रिय का बेटा! पाप से छेदन होता है और मृत्यु से पार होने के लिए प्राण देवता को अपने समीप लाने का प्रयास किया और समीप ला करके उन्होंने श्रोत्र को मृत्यु से उलांघ दिया, मृत्यु से पार कर दिया। अन्धकार नहीं रहा। क्योंकि जो शरीर में सर्वत्र श्रवण इन्द्रिय बनी हुई थी, वह बाह्य लोक में ब्रह्माण्ड से जब इसका मिलान किया गया, ब्रह्माण्ड से जब इसका समन्वय किया गया, ब्रह्माण्ड को जब अर्पित की गई तो मेरे प्यारे! **श्रोत्रेन्द्रिय छः दिशा बन करके रह गई** और उसमें सर्वत्र ब्रह्माण्ड प्रकाश ही प्रकाश में दृष्टिपात आने लगा। तो बेटा ! जब प्रकाश ही प्रकाश हो गया तो मृत्यु वहाँ न रही। मृत्यु का विनाश हो गया। मेरे प्यारे देखो ! मृत्यु का यहाँ जब अन्धकार ही नहीं तो मृत्यु कहाँ रहेगी। मृत्यु तो अन्धकार ही में रहने वाली है। मृत्यु तो अज्ञान में रहने वाली है वह ज्ञान में रहने वाली नहीं।

महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज का मनस्तत्त्व पर चिन्तन

मैं मार्कण्डेय ऋषि के द्वार पर तुम्हें ले जा रहा था। उनकी चर्चाएँ प्रारम्भ हो रही थीं, जो बेटा ! भौतिकवाद में भी पारायण और आध्यात्मिकवाद में भी पारायण थे। मेरे पुत्रो ! देखो और भी नाना ऋषि विद्यमान हो गए। उनके समीप आ गए। चिन्तन मनन चल रहा था। विचार होने जा रहा था। तो मेरे प्यारे देखो ! मनस्तत्त्व पर आ गए। यह मनस्तत्त्व क्या है? जो यह मन बेटा ! देखो ! शरीर में गति कर रहा है। यह मन जब मेरे प्यारे ! इस मानव पिण्ड में मन बन करके यह जब तक रहता रहा, तब तक असुरों ने इसे छेदन कर दिया था। असुरों ने इसे पाप से छेदन कर दिया। जहाँ मुनिवरो! देखो यह मन विशाल ऊँचा संकल्प करता था वहाँ विकल्प और अशुद्धता भी आ गई। यह जहाँ-जहाँ दर्शनों की विवेचना कर रहा था, वहाँ यह अशुभ विवेचना भी करने लगा। यह जब अशुभ विवेचना करने लगा तो वहीं यह पाप से छेदन हो गया। मानो ! मृत्यु ने इसको अपने में जकड़ लिया। मृत्यु ने अपने में अपना ग्रास बना लिया। अपना भोज्य बना लिया मृत्यु ने। मृत्यु को जब क्षुधा लगी तो बेटा ! इस मन को निगल लिया। मन को निगलती हुई बेटा ! कहाँ चली गई? वह अपने असुरों के द्वार पर चली गई।

मेरे पुत्रो ! विचार आता रहा ऋषियों को कि यह जो मन है इसको हमें जानना है। इस मन को बेटा! जब प्राण-रूपी देवता ने अपने समीप लाने का प्रयास किया और प्राण-रूपी देवता ने कहा, ''मन ! तुझे मैं मृत्यु से पार ले चलूँ।'' बेटा ! जब यह मन प्राण-रूपी देवता के द्वार पर पहुँचा तो मेरे प्यारे ! देखो इस प्राण-देवता ने अपने ऊर्ध्वा में अर्पित करते हुए यह जहाँ शरीर में, पिण्ड में यह मन बन रहा था। जब यह बाह्य जगत् में, ब्रह्माण्ड में दृष्टिपात किया तो यही चन्द्रमा के रूप में बन गया। यह मन चन्द्रमा बन गया। सोम की वृष्टि करने लगा। मेरे प्यारे ! प्राण का जब मिलान हुआ तो मन का जो वास्तविक स्वरूप था वह चन्द्रमा के रूप में दृष्टिगोचर होने लगा।

मेरे पुत्रो ! जब चन्द्रमा सोम की वृष्टि करता है। उस सोम को योगीजन पान करते हैं। जैसे माता वसुन्धरा के गर्भ-स्थल में जब कृषक बीज की स्थापना कर देता है तो मेरे पुत्रो ! चन्द्रमा से सोम की वृष्टि होती है। और सोम को पा करके कृषि उपजाऊ, उपयोगी बन जाती है। नाना प्रकार की सोमलताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। मेरे प्यारे ! वे जो सोमलताएँ हैं, वे जब मानो ! ऊर्ध्वा में आने लगीं तो वही मानव का अन्नमय प्राणों को संचालित करने वाला, मन में स्मरण शक्ति लाने वाला मेरे प्यारे ! वह मनस्तत्त्व है वह अन्नमय बन गया और वह मनस्तत्त्व को प्राप्त होने लगा।

मेरे प्यारे! वह कौन है? वह मन की एक धारा है, वह मन का स्वरूप है कि वह सोम की वृष्टि करने लगा क्योंकि प्राण का सन्निधान हो गया। अथवा प्राण-देवता ने उसको जब उसके चन्द्रमा के स्वरूप का वर्णन कराया, चन्द्रमा दृष्टिपात करने लगा तो बेटा ! वह सोम को पान करने लगा। उसी सोम के द्वारा, बेटा ! **जब योगीजन समाधिस्थ होते हैं; समाधिस्थ जब होने लगते हैं तो बेटा !** वे 'मूलाधार', मूलाधार से 'नाभि-चक्र', नाभिचक्र से 'स्वाधिष्ठान-चक्र', स्वाधिष्ठान चक्र से 'हृदय-चक्र', हृदय से कण्ठ-चक्रों में रमण करता हुआ बेटा ! 'ध्राण' के द्वारा चला जाता है; और ध्राण के द्वार पर यह 'त्रिवेणी' में चला जाता है। जहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती तीनों का, तीनों नदियों का मिलान होता है।

इस मानव शरीर रूपी पिण्ड में मेरे प्यारे! तीन नाड़ियाँ कहलाती हैं—एक गंगा है, एक यमुना है और एक सरस्वती। इसको मुनिवरो! देखो इडा, पिंगला और सुषम्ना कहते हैं। मेरे पुत्रो ! जब यह मनस्तत्त्व, प्राण-देवता के समीप मिलान करता हुआ जब यह त्रिवेणी में जाता है तो वहाँ पर ये तीनों नदियाँ एक हो करके त्रिमार्ग में रह करके एक हो करके ये 'ब्रह्मरन्ध्र' में चली जाती हैं।

मनस्तत्त्व का ब्रह्मरन्ध में प्रवेश

जब यह 'ब्रह्मरन्ध्र' में प्रवेश करता है, तो ब्रह्मरन्ध्र की जो

'पंखुडियाँ' हैं वे गति करने लगती हैं। जब गति करने लगती हैं तो ब्रह्मरन्ध्र के ऊर्ध्वा भाग में **'पी आशा क्रेत-केतु'** एक स्थान कहलाता है जिसमें बेटा ! सोम रहता है। जब वे पंखुड़ियाँ गति करती हैं तो उसमें से परमाणु वे अमृत-रूपी-परमाणु आने प्रारम्भ हो जाते हैं।

किन्हीं-किन्हीं ऋषियों का यह मत है कि वे 'रसना' के अग्र भाग से उसको पान करता है। परन्तु जिन ऋषियों का यह मत है कि परमाणु जब गति करने लगते हैं, तो वे योगी ब्रह्माण्ड को, लोक-लोकान्तरों को दृष्टिपात करना उनके लिए खिलवाड़ बन जाता है।

जब ब्रह्मरन्ध्र से वे नाड़ियाँ **'त्रिवर्धा'** एक बन करके गति करती हैं तो मुनिवरो ! वे जब सोमरस का पान करती हैं, तो मुनिवरो ! देखो, एक धारा में सहस्रों क्या? अरबों-खरबों धाराएँ जन्म ले करके ऊर्ध्वा गति में उनका समन्वय हो जाता है। जब समन्वय होता है तो उसके लिए जो नाना लोक-लोकान्तर हैं, वहाँ उनका क्रियाकलाप, उनमें जो गतियाँ हो रही हैं, उनमें जो प्राणी-मात्र हैं, योगी जब उसको दृष्टिपात करने लगता है। **वह सोमरस कहलाता है।** वह सोमरस कहाँ से आता है? पुत्रो ! वह चन्द्रमा का उज्ज्वल स्वरूप माना गया है।

हमारे आचार्यों ने चन्द्रमा की दो व्याख्याएँ की हैं। एक व्याख्या यह है कि यह चन्द्र-मण्डल है। एक व्याख्या यह है कि जब सोम की वृष्टि होती है तो यह ब्रह्माण्ड एक चन्द्र स्वरूप बन करके सोम की वृष्टि करता रहता है। जैसे पृथ्वी को यह चन्द्रमा सोम से भर देता है। इसी प्रकार जब योगीजन योगाभ्यास करते हैं, 'ब्रह्मरन्ध्र' के द्वार पर जाते हैं तो मुनिवरो ! देखो, 'प्राणत्व', मनस्तत्त्व इन दोनों का सन्निधान हो करके, मिलान हो करके यह जो पिपाद स्थान है जिसमें से सोम की वृष्टि होती है, सोम के परमाणु झरने लगते हैं उसको मेरे प्यारे ! ऋषि जन अन्तर्मुखी हो करके पान करते हैं। अन्तर्ध्यान हो करके पान करने लगते हैं। मेरे प्यारे देखो ! वहाँ आवागमन की प्रतिभा भी समाप्त हो जाती है।

मेरे प्यारे ! यही मन है। वही मनस्तत्त्व है जिसके ऊपर चिन्तन करना है आज हमें इस मन को। यह मन जब चन्द्रमा बन गया पिण्ड के स्वरूप में से ओझल हो करके वह याज्ञिक बन गया तो बेटा ! चन्द्रमा बन गया। चन्द्रमा सोम की वृष्टि करने लगा। यह सोम प्रत्येक वनस्पतियों में पान कराता रहा। यह सोम ही प्रत्येक वनस्पतियों में आभायित कराता रहा।

मेरे पुत्रो ! विचार विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें ऐसे आसन पर ले गया हूँ जहाँ सोम की वृष्टि होती रहती है। मुझे बेटा ! जब अपने पूज्यपाद गुरुओं के आसन पर जाने का सौभाग्य प्राप्त था, तो सोम के जहाँ परमाणु बिखर रहे हों बेटा ! वहाँ हिंसक प्राणी भी मौन हो करके उनको पान करने लगते हैं।

महर्षि दधीचि का सोम पान

मेरे पुत्रो ! मुझे स्मरण है। एक समय महर्षि दधीचि अपने आसन पर विद्यमान थे। महर्षि दधीचि बेटा ! आसन पर विद्यमान हो करके वे सोम को पान कर रहे थे। मेरे प्यारे ! जो मन चन्द्रमा बन करके सोम की वृष्टि करने लगा तो सबसे प्रथम वे 'मूलाधार' में पहुँच गये थे। मूलाधार का जब अनुभव कर रहे थे। जहाँ इस मूलाधार में प्रवेश करने से मनस्तत्त्व, प्राणतत्व चन्द्रमा का जितना रस इस पृथ्वी के गर्भ-स्थल में नृत्य कर रहा था वह उस ऋषि को बेटा ! मूलाधार में ही स्मरण होने लगा। उन्हें वह दृष्टिपात होने लगा। भू-तल की वार्ता भूतल का विज्ञान उसके समीप आ गया।

उसके पश्चात् वे 'नाभिचक्र' में चले गये। नाभिचक्र में जहाँ वायु गतियाँ कर रही थीं। भिन्न-भिन्न प्रकार की वायु बेटा ! दस (10) प्रकार की वायु गति कर रही थीं। उन वायु की तरंगों में भी उन्हें सोम-रस दृष्टिपात आ रहा था। वे सोम को पान कर रहे थे।

मेरे प्यारे ! जब 'नाभि-केन्द्र' से वे स्वाधिष्ठान चक्र में आ पहुँचे तो वहाँ अग्नि का प्रकाश, अग्नि प्रचण्ड हो रही है। अग्नि अपने वेग

में। मेरे प्यारे ! अग्नि में भी सोम दृष्टिपात आ रहा था। सोम जब अग्नि बन करके सोम उसमें दृष्टिपात हो रहा था ऋषि को। ऋषि ने उसमें आगे गति की।

आगे चल करके 'हृदय-चक्र' में प्रवेश किया तो बेटा ! हृदय जो गति कर रहा था उसमें ''एक चित्रिकाम् ब्रह्म लोकाम् अन्तरिक्षाम् देवाः।'', अन्तरिक्ष विद्यमान था। अन्तरिक्ष में जहाँ शब्द स्थित रहता है। जहाँ शब्दों की धाराएँ रहती हैं। जब शब्द चित्र के समीप रहते हैं। जहाँ शब्द अपनी अपनी आभा में गति करने लगता है। मेरे पुत्रो ! जहाँ से जो सन्जीवित है वहाँ वह पितर-लोकों को प्राप्त कर, पितर-लोकों को दृष्टिपात करने लगता है। शब्दों के द्वारा, अन्तरिक्ष के द्वारा। मेरे प्यारे ! अन्तरिक्ष का जो सूक्ष्म-मण्डल है वह हृदय-चक्र में से हृदय—आभा में और उस अन्तरिक्ष में बेटा ! उसे सोम दृष्टिपात आ रहा है।

वह सोम को पान करता हुआ 'कण्ठ-चक्र' में पहुँच गया। जहाँ मेरे पुत्रो ! देखो ! चित्त में जहाँ 'उदान-प्राण' का वास रहता है। प्राण की एक धारा का नाम है—उदान। जब यह मानव शरीर को त्यागता है प्राणी, तो उदान, चित्त का मण्डल 'अश्राम् बह्वयेः मनस्तत्त्व सोमम् बृहिः यह सोम। जब यह आत्मा उससे निकल जाता है—उदान प्राण के द्वारा चित्त का मण्डल प्राणों से गुंथा हुआ है। वह चित्त से दृष्टिपात होने लगता है योगी को।

यह जो चित्त दृष्टिपात आ रहा है इस चित्त में बेटा ! करोड़ों-करोड़ों जन्मों के संस्कार विद्यमान होते हैं। उस योगी को कण्ठ-चक्र में जाते ही करोड़ों जन्मों के जो संस्कार चित्त में विद्यमान हैं बेटा ! उसे साक्षात्कार होने लगते हैं। मुनिवरो ! वह साक्षात्कार करने लगता है।

मेरे पुत्रो ! देखो ! जब 'कण्ठ-चक्र' से - मैं तुम्हें परिचय करा रहा हूँ व्याख्या नहीं दे रहा हूँ उसके पश्चात् जब यह कण्ठ-चक्रों से उर्ध्वागति में 'ध्राण-चक्रों' में जाता है, तो अन्तरिक्ष में जितने परमाणु आते हैं, आदान-प्रदान ध्राण के द्वारा हो रहा है। परमाणुवाद मानो

यातायात बना हुआ है। परमाणुओं के साथ में उस मानव का चित्र, जिसमें चित्र जन्म-जन्मान्तरों की आभा में वायु मण्डल में प्रवेश कर गये हैं, वे ध्राण-चक्र में जाते ही बेटा ! उसे साक्षात्कार होने लगते हैं।

मेरे पुत्रो ! आगे जब ये 'त्रिवेणी' में जाता है, तो जितनी 'त्रिविद्या' है, संसार का जितना भी ज्ञान और विज्ञान है वह सब 'त्रिविद्या' में माना गया है। मेरे पुत्रो ! 'ज्ञान', 'कर्म', और 'उपासना' इन तीनों का जब त्रिवेणी में, स्थलियों में प्राप्त होने लगता है तो मुनिवरो! देखो यह संसार 'त्रिविध' दृष्टिपात होने लगता है। 'आत्मा', 'परमात्मा' और 'प्रकृति'। बेटा ! ये तीनों उस ऋषि को साक्षात्कार अर्थात् ये जो स्वरूपों में दृष्टिपात होने लगता है।

मेरे प्यारे ! और इसके पश्चात् जब ये त्रिवेणी को भी त्याग देता है। नाना 'कृतिकायें' होती हैं। इस त्रिवेणी के स्थान में। परन्तु मैं इन कृतिकाओं की व्याख्या में नहीं जाऊँगा। तुम्हें परिचय कराने के लिए आया हूँ। व्याख्या तो मैं किसी काल में करूँगा जब वेदों का मन्त्र आता रहेगा, विचार-विनिमय करता रहूँगा। आज तो मैं केवल तुम्हें परिचय करा रहा हूँ।

पुत्रो ! उसके पश्चात् यही 'वृतम् देवाः' जब ये ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश करता है, तो सर्वत्र उसको सोम ही सोम दृष्टिपात होने लगता। एकाकी चरण बन गया है। अनेकता में एकाकी चरण बन करके सर्वत्र सोम ही सोम जैसे जलाशयों में जल ही जल तुम्हें प्रतीत होता है। नाना तरंगों में भी अमृत दृष्टिपात होता है।

इसी प्रकार वहाँ 'पिपाद' और 'ब्रह्मरन्ध्र' दोनों का समन्वय हो करके अमृतमय हो जाता है।

तो परिणाम क्या? वेद के ऋषियों ने यह कहा है, ''हे मानव ! मैं महात्मा दधीचि की चर्चा कर रहा था।

महात्मा दधीचि बेटा ! देखो ! मूलाधार से लेकर के 'ब्रह्मरन्ध्र', 'पिपाद' स्थान तक सोम को ही दृष्टिपात करते रहे। यह सोम दृष्टिपात

तब होता है जब मुनिवरो ! यह मन और प्राण दोनों का समन्वय होने पर ये मृत्यु को उलांघ देता है। इसकी मृत्यु नहीं होती।

मेरे पुत्रो देखो ! एक सूत्र में मनका बन करके, रह करके माला के सदृश बन जाता है।

तो मेरे पुत्रो! विचार-विनिमय क्या है? **मैं तुम्हें यह विचार देने जा रहा था, कि यह मन है जिस मन को, प्राण को संयम से यह संसार अमृतमय बन जाता है।** हमें अमृत को पान करना है। इसी को बेटा ! ऋषिजन, इस संसार-रूपी सागर को खारी बना करके बेटा ! जैसे महर्षि दधीचि ने सर्व को जाना। यही महर्षि अगस्त्य मुनि ने जाना।

महर्षि अगस्त्य का अनुसन्धान

अगस्त्य मुनि जब इसका अनुसन्धान करने लगे—योग मन और प्राण का। दोनों का अनुसन्धान करने से उन्होंने रक्षार्थ बनते हुए इस संसार-रूपी समुद्र को जैसे उपस्थ इन्द्रिय के द्वारा ''जन्म ब्रह्मः कृत्याः'' खारी बना करके त्याग देता है। इसी प्रकार महर्षि अगस्त्य मुनि ने बेटा ! इस संसार को अपने विवेक, ज्ञान के द्वारा इससे अमृतमय संसार से अपने को बनाते हुए संसार से पार हो गये। यह संसार-रूपी जो सागर है—इसमें मान है, कहीं अपमान हो रहा है, कहीं घृणा से दृष्टिपात कर रहा है, कहीं 'अघृणा' आ रही है, कहीं मेरे प्यारे ! लोलुपता में परणित हो रहा है। यह जो संसार-रूपी नाना प्रकार की तरंगें मानव को प्रभावित करती रहती हैं। मन और बुद्धि को प्रभावित करती रहती हैं। जब ये मन अपनी चतुष्बुद्धियों (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) को ले करके प्राण देवता के समीप चला गया तो मेरे प्यारे ! यह संसार-रूपी सागर को खारी बना करके जैसे, अगस्त्य मुनि के जीवन में आता है कि उन्होंने इस संसार-रूपी सागर को खारी बना करके त्याग दिया, वैसे ही योगी मानव शरीर को त्याग देता है।

इसी प्रकार हमें भी अपने जीवन में संसार-रूपी सागर को खारी बना करके त्याग देना है। इससे उदासीन होना है। उदासीन हो करके ही मृत्यु से पार हो सकोगे।

जीवन को अमृतमय बनाने की प्रेरणा

मानव का उद्देश्य संसार में क्या है? ये व्याख्यायें ऋषियों ने क्यों की है? क्यों इसको जानने का प्रयास किया है। क्योंकि संसार का कोई प्राणी मृत्यु को नहीं चाहता है। वह मृत्यु को उलांघना चाहता है, मृत्यु से पार हो जाना चाहता है।

मेरे पुत्रो ! मृत्यु से पार तुम कैसे होंगे? जब तक जीवन अमृतमय नहीं बनेगा। अमृत ही अमृत हमें दृष्टिपात करना है।

इसके पश्चात्, मेरे पुत्रो! विचार-विनिमय क्या? कि हमें अमृत को दृष्टिपात करना है, अमृतमय बनना है। अमृतमय कौन बनता है? मेरे प्यारे ! जो योगी होता है। योगी कौन होता है? जो प्राण-देवता के द्वार पर चला जाता है। उससे अपना समन्वय कर लेता है। प्राण-देवता मृत्यु से उलांघ देते हैं। क्योंकि प्राण के समीप असुर नहीं आते। क्योंकि असुर तो उसके समीप इसलिए नहीं आते कि वे प्राण असुरपन को स्वीकार नहीं करते। अतः उनका साहस नहीं बनता, वे स्वार्थी ही को देखना चाहते हैं, परन्तु प्राण-देवता तो ऐसा देवता है मुनिवरो! देखो यह पाप से छेदन नहीं होता। यह सदैव अमृत ही बना रहता है। यह सदैव निःस्वार्थ रहता है। स्वार्थ-त्याग का आदर्श है। यह सर्वत्र आभा में गति करने वाला है। सदैव निःस्वार्थ रहता है।

इसी प्रकार मुनिवरो! देखो प्रत्येक प्राणी को प्राण की भाँति निःस्वार्थ हो करके अमृत को पान करना है। सोम-रस को पान करते हुए बेटा ! इस संसार सागर से पार होना है।

मेरे प्यारे ! मन की बहुत सी आभाएँ हैं। समय आता रहेगा मैं तुम्हें प्रगट करता रहूँगा। आज तो मैंने तुम्हें बेटा! संक्षिप्त परिचय कराया है। अब इसके आगे की जो चर्चाएँ हैं, मैं चर्चाएँ करता रहूँगा। आज

का विचार-विनिमय क्या? कि जब हम देवता प्राण के समीप पहुँचे तो वह मन एक मनका बन करके सूत्र में पिरोया गया।

मेरे प्यारे ! ये पाँच मनके हैं। जो इन पाँचों मनकों को बेटा। प्राण-रूपी देवता के समीप और उस सूत्र में पिरोये जाते हैं। वही बेटा ! सोमरस को पान करता है और जो सोमरस पान करता है बेटा ! वही 'मोक्ष' को चला जाता है। वह ही मोक्ष में प्रवेश कर जाता है और जो मोक्ष में जाता है वह ही परमानन्द का आनन्द लेता है। बेटा ! वह ही आवागमन के क्षेत्र से दूर हो जाता है। यह है पुत्रो ! आज का हमारा वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि मैंने बेटा ! तुम्हें श्रोत्रों से लेकर मन-रूपी मनका, प्राण-रूपी सूत्र में पिरोने का प्रयास किया और मेरे प्यारे ! वह भी अनुसन्धान की दृष्टि से। यही मुनिवरो ! देखो, योगी क्या, ये ही वैज्ञानिकजनों की भी एक आभा बन करके रहती है। आओ मेरे पुत्रो। आज का विचार समाप्त। अब मुझे समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएँ इस मन के सम्बन्ध में कल प्रगट करूँगा। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

वेद पाठ----------

अच्छा भगवन्!

आनन्दित रहो!

दिनाँक : 23 अप्रैल, 1979

समय : प्रातः 7 बजे

स्थान : आर्य समाज, शक्तिनगर, अमृतसर

।। ओ३म् ।।

माता मदालसा द्वारा वनों में पुत्रों की परीक्षा

प्रह्लाण, शिलभ और दालभ्य (तीनों महान् ऋषि) भयँकर वन में तपस्या जब करने लगे उस समय माता मदालसा की यह इच्छा हुई कि वह बाल्य मेरे गर्भ से जन्म जिन्होंने लिया है, वह वास्तव में तपस्वी बने हैं या वनचर, वैसे ही वनों में अपने जीवन को व्यतीत कर रहे हैं। तो मुझे स्मरण है माता मदालसा ने अपने आसन से गमन किया। भ्रमण करते हुए वह वनों में जा पहुँची, जहाँ वह बालक तपस्या कर रहे थे। एक पंक्ति में विद्यमान हो करके, तपस्वी बन करके प्रभु से ध्यानावस्थित हो रहे थे प्रभु के आंगन में। माता मदालसा जैसे ही उनके द्वार पर पहुँची, कुछ समय पश्चात् वह उपरामता को प्राप्त हुए। माता मदालसा के चरणों को स्पर्श किया और माता से कहा, हे मातेश्वरी! तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा हे पुत्रश्चयताम् ब्रहेः। मेरी इच्छा यह बनी कि मैं अपने बाल्यों को दृष्टिपात करना चाहती हूँ। वह बाल्य उत्तर देते हैं हे माता! तेरे बाल्यपन का उद्देश्य पूर्ण हो गया है। अब हम परमात्मा की गोद में हैं। क्योंकि परमात्मा के राष्ट्र से हम दूरी नहीं हो सकते। हम माता तेरे से दूरी हो सकते हैं परन्तु प्रभु जो सर्वत्र माता-पिता के रूप में गमन कर रहा है, एक-एक परमाणुमात्र में वह गति कर रहा है हम उस राष्ट्र से दूरी नहीं हो सकते। हे मातेश्वरी! आपका कर्त्तव्य पूर्ण हो गया है। अब आप अपने आसन पर जाइए क्योंकि आपने हमें इस योग्य बनाया है। आपने हमारा पालन किया है। अब प्रभु के राष्ट्र में हम विद्यमान हैं क्योंकि वह हमारा पालन करने वाला है। माता मदालसा इन वाक्यों को श्रवण करके हृदय में आनन्दवत् होने लगी और कहा धन्य है हे बाल्य! मैं यही चाहती थी कि तुम्हारे में इतना ज्ञान हो, प्रभु में तुम्हें इतना अटूट विश्वास होना चाहिए। यह

जो संसार दृष्टिपात आ रहा है इससे तुम्हारा जीवन उपरामता को प्राप्त होना चाहिए।

ध्यानावस्थित किसमें होना है

परन्तु माता मदालसा ने यह कहा हे बालक तुम तपस्या क्या करते हो? अब जो मैंने तुम्हें दृष्टिपात किया कि तुम ध्यानावस्थित हो रहे थे किस वस्तु से तुम ध्यानावस्थित होते हो? वह कौन सी वस्तु है जिसमें ध्यानावस्थित होने से तुम्हारे मन की प्रवृत्ति एक महत्ता में परणित हो जाती है? उनमें से **ज्येष्ठ बाल्य प्रह्लाण ने कहा,** हे माता! हम जो ध्यानावस्थित होते हैं वह जिससे हमें यह मानव जीवन प्राप्त हुआ है, मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ है, इनमें दो वस्तुओं का विभाजन होता है और उन दोनों वस्तुओं को जो विभक्त हो गई हैं हम उनको एक सूत्र में लाना चाहते हैं। वह दोनों वस्तु कौन सी है? जो विभक्त हो गई हैं और ध्यानावस्थित होने वाले ध्यान में उन दोनों को एक सूत्र में लाते हैं। वेद का ऋषि कहता है, प्रह्लाण ने कहा, वह बाल्य कहता है माता से, हे माता! हम ध्यानावस्थित होते हैं, जिन वस्तुओं का विभाजन हो गया है। विभक्त करने वाली और विभाजन होने वाली दो ही प्रतिक्रियाएँ सर्वत्र ब्रह्माण्ड में होती रहती हैं। आज जब हम दृष्टिपात करते हैं माता के गर्भ में, हम वसुन्धरा के गर्भ में प्रवेश करते हैं जो वसुन्धरा नाम पृथ्वी का है। जब पृथ्वी के गर्भ में हम प्रवेश करते हैं तो मन और प्राण हमें दृष्टिपात होते हैं। जो सामान्य प्राण इस पृथ्वी के गर्भ में रहता है, जो प्राण अप्रतम् तेज के द्वारा, सूर्य की नाना किरणों के द्वारा पदार्थों को निर्माणित करता रहता है, कोई रस प्रदान कर रहा है। कोई रस को विभक्त कर रहा है तो वह मन और प्राण ही मुझे दृष्टिपात आते हैं। मेरे प्यारे! ऋषि कहता है कि इसी प्रकार हमारे मानव शरीर में यह जो नाना प्रकार की विभक्त क्रियाएँ दृष्टिपात आती हैं, कहीं माता के रूप में, कहीं पिता के रूप में, कहीं पुत्री के रूप में, कहीं पत्नी के रूप में, यह जो संसार विभक्त होता हुआ, जो नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में गति करने वाली प्रतिक्रिया हो रही है, हे

मातेश्वरी! जब हम यहाँ से ध्यानावस्थित हो करके इन लोक-लोकान्तरों की यात्रा करते हैं, तो उस समय हमें प्रत्येक लोक में एक सी क्रिया दृष्टिपात होती है। यह जो संसार है, यह जो जगत् है यह दो वस्तुओं से विभक्त होने वाले तत्त्वों के यह ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आ रहा है। हे मातेश्वरी! हम जो अपने में ध्यानावस्थित होते हैं तो हम इस मानव के शरीर में दो वस्तुओं का विभाजन हो गया है एक मन है और दूसरे को हम प्राण कहते हैं। इन दोनों रूपों में यह शरीर दृष्टिपात आता है। **जब इस मानव शरीर की प्रतिक्रिया मन के साथ होती है तो यह प्रकृतिवाद एक महत्ता में दृष्टिपात आता है, जब किसी मानव की प्रवृत्तियाँ प्राण के साथ होती हैं तो एक सूत्र में दृष्टिपात आता है।** हम उसी सूत्र में, सर्वत्रता में पिरोए हुए हैं जो माला में एक धागा होता है और वह धागा उस माला को स्थिर किए रहता है क्योंकि माला में यदि धागा नहीं होगा तो यह मनके बिखर जाते हैं। इस प्रकार हे मातेश्वरी! यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है नाना प्रकार की निहारिकाओं वाला, नाना लोक-लोकान्तरों वाला जो ब्रह्माण्ड है, एक-एक आकाश गंगा में अनन्त सूर्य दृष्टिपात आते हैं। एक ही आकाश गंगा में अनन्त ध्रुव मण्डल दृष्टिपात आते हैं, बृहस्पति दृष्टिपात आते हैं। एक-एक लोक को तपाने के लिए बहत्तर-बहत्तर सूर्य दृष्टिपात आते हैं। आज हम उस परमात्मा की जो सृष्टि है उसको अपने में तुलनात्मक दृष्टिपात नहीं कर सकते। हम परिचय देते रहते हैं, विचारते रहते हैं। तो प्रह्लाण ने कहा 'हे माता! आप क्या आश्चर्य करोगी जब ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने के लिए हम तत्पर होते हैं एक सूत्र दृष्टिपात आता है और उसी सूत्र में नाना लोक-लोकान्तर क्या? यह जितनी निहारिकाएं हमें दृष्टिपात आती हैं, एक सूत्र में पिरोई हुई दृष्टिपात आती हैं और वह जो सूत्र है उसी सूत्र में हमारा यह जो मानव शरीर है, नाना अंग हैं यह जो निर्माणित हो रहे हैं वह भी एक सूत्र में दृष्टिपात आते हैं। जैसे माला है, माला में मनके हैं मनके एक सूत्र में पिरोए होने से यह माला कहलाती है, इसी प्रकार यह नाना निहारकाएं, नाना पृथ्वीयाँ एक सूत्र में पिरोने से यह सृष्टि दृष्टिपात

आती है। यह सृष्टि है, यह माला है, इसी प्रकार हमारा यह मानव शरीर एक प्राण सूत्र में पिरोया हुआ है। हे मातेश्वरी! यह जो प्राण सूत्र है इस प्राण सूत्र को हम जान करके यह जो बिखरे हुए मनके हैं उसको हम प्राण रूपी सूत्र में पिरोने का प्रयास करते हैं। वही हम ध्यान में दृष्टिपात करते हैं।

ब्रह्मचर्य का अर्थ

माता मदालसा ने अपने को धन्य स्वीकार किया और यह कहा कि धन्य है हे बालक! ब्रह्मचरिष्यामि, तुम ब्रह्मचर्य के क्या अर्थ स्वीकार करते हो? मेरे प्यारे! प्रह्लाण ने शिलक से कहा, हे शिलक! इसका उत्तर तुम दो। **मुनिवरो! ब्रह्मचारी शिलक ने कहा,** हे माता! "ब्रह्मचरिष्यामी" ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को, चरि कहते हैं प्रकृति को। 'ब्रह्म और चरि' दो ही शब्द संसार में हैं। ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वागति बनाने वाला देवता बनता है, ध्रुवा गति बनाने वाला पितृ यागी बनता है, वह पितृ याग कर रहा है। वहाँ सन्तान का नामो-उपार्जन होता है और वहाँ देवताओं की सभा में जाना होता है, तो इसीलिए ब्रह्मचर्य के दो ही अर्थ हैं। चरि कहते हैं प्रकृति को और ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को। ब्रह्म और चरि दोनों का समन्वय होता है तो यह संसार रच जाता है। संसार की उत्पत्ति हो जाती है। ब्रह्म और चरि के सन्निधान मात्र से ही संसार अपना-अपना कार्य करना प्रारम्भ कर देता है। हे माता! हम इतना ही जान पाए हैं ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को और चरि कहते हैं प्रकृति को जो हमें दृष्टिपात आ रही है। लोक लोकान्तरों से ले करके **जो भी मानव के नेत्रों से दृष्टिपात आता है उसका नाम प्रकृति है और जो आभा में रमण करने वाला, जो चेतना में, तरंगों में, आभा में रमण करने वाला है वह ब्रह्म कहलाता है।** दोनों का सन्निधान, दोनों का मिलान होते ही इस संसार की रचना होती है। ब्रह्म और चरि दोनों शब्दों का निर्माण हो जाता है। हम ब्रह्म और चरि दोनों के ऊपर विचार-विनिमय करते चले जाएँ। माता पुनः अपने में धन्य स्वीकार करने लगी। उन्होंने

कहा, धन्य है हे बाल्य! "ब्रह्मचरिष्यामि" तुम ब्रह्मचर्य के इतने अर्थों को जानते हो उतना सुसज्जित है, महान् है, यही दर्शनकारों ने इसका वर्णन किया है।

प्राण सूत्र क्या है

आगे मदालसा ने अपना एक प्रश्न और किया, हे बालक! संसार में यह प्राण सूत्र क्या है? तो मेरे प्यारे! माता मदालसा ने यह प्रश्न जब ब्रह्मचारियों से कहा तो प्रह्लाण ने दालभ्य से कहा इसका उत्तर तुम दो। **मुनिवरो! दालभ्य ने कहा** हे माता! यह प्राण सूत्र वह है जिसमें प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक परमाणु पिरोया हुआ है। मुझे स्मरण है जब हम ध्यानावस्थित होते हैं तो हम एक परमाणुवाद में गति करते हैं तो यह परमाणुवाद भी गति कर रहा है। सूर्य भी गति कर रहा है और लोक भी गति कर रहा है, निहारिका भी गति कर रही है और यह जो पृथ्वी-मण्डल है यह भी गति कर रहा है। इन सबमें प्राण सूत्र ही दृष्टिपात आता है। प्राण सूत्र क्या है? एक मानव सुषप्ति में चला जाता है। सुषुप्ति में जाने के पश्चात् प्राण सूत्र ही रमण कर रहा है। प्राण सूत्र ही मानव को जीवन देता है। मन भी अपनी सामान्य अवस्था में परणित हो जाता है परन्तु मनस्तत्त्व ऐसा है जो सूत्र में पिरोया हुआ होने के नाते वह प्राण सूत्र कहलाता है। प्राण सूत्र क्या है? प्रीति का नाम प्राण सूत्र है। जहाँ प्रीति शब्द आता है वहीं प्राण सूत्र दृष्टिपात आता है। यह संसार प्राण सूत्र में पिरोया हुआ है। एक-दूसरे में मानव पिरोया हुआ दृष्टिपात सा आता है। जैसे पत्नी-पति की सहायक है। पुत्र पिता का सहायक है। और पति पत्नी का सहायक है। पिता पुत्र का सहायक बन रहा है। एक लोक दूसरे का सहायक बना हुआ है। यह सब प्राण सूत्र कहलाता है। मुनिवरो! चन्द्रमा अपनी आभा में अमृत की वृष्टि कर रहा है वह सूर्य का सूत्र कहलाता है। सूर्य से उसे सहायता प्राप्त हो रही है। मानव-मानव का सहायक बना हुआ है। **इस पृथ्वी मण्डल पर जितने बेटा! यह प्राणी हैं, एक प्राणी दूसरे का सहायक बन रहा है और बनता हुआ एक चक्र चल रहा है, यह सब प्राण**

सूत्र कहलाता है। यह उत्तर देने के पश्चात् कहा हे मातेश्वरी! यह संसार जितना दृष्टिपात आता है यह सब प्राण सूत्र है। प्राण में ही एक-एक परमाणु अणु पिरोया हुआ है। यह उत्तर पाने के पश्चात् मदालसा मौन हो गयी और मदालसा ने कहा धन्य है! हे बालक! मेरा जीवन सफल हो गया है। मैं यही चाहती थी कि मेरे गर्भ से ऐसे बालक का जन्म हो जिनके जीवन में सदैव प्राण की आभा निहित रहे। माता मदालसा जब गमन करने लगी तो मुनिवरो! उन तीनों पुत्रों ने उनके चरणों को स्पर्श किया। उन्हें आशीर्वाद दे करके वहाँ से उनका गमन हुआ। अपने गृह में प्रवेश किया। अयोध्यापुरी में आ गयी। रात्रि और दिवस सदैव इसी वाक्य का चिन्तन करती रही कि हमें प्राण सूत्र को जानना है।

दिनाँक : 11 दिसम्बर, 1981

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	**1000 रुपये**
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़, उत्तर प्रदेश	**1000 रुपये**
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	**1000 रुपये**
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	**1000 रुपये**
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	**500 रुपये**
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	**500 रुपये**
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	**251 रुपये**
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	**251 रुपये**
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	**250 रुपये**
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	**200 रुपये**
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा, उत्तर प्रदेश	**125 रुपये**
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	**100 रुपये**
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश	**100 रुपये**
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	**101 रुपये**
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	**101 रुपये**

।। ओ३म् ।।

ऋषियों के उद्‌गार

1. हम पंच महा-यज्ञों को करने वाले बनें।
2. मानव को अपने हृदय को स्वच्छ, निर्मल और पवित्र बनाना है।
3. सबसे प्रथम अन्न को सूक्ष्म और स्थूल दोनों प्रकार के अन्नों को जानना है।
4. अन्नों में जो कोष है, इसी कोष को हमें सबसे प्रथम जानना है।
5. सबसे प्रथम मौन होकर के तेरा (मानव) अन्न पवित्र होना चाहिए।
6. अन्न का निर्माण करने वाली मेरी प्यारी माता को भी पवित्र होना चाहिए। अन्न का पान करने वाला भी विचारों में पवित्र होना चाहिए।
7. साधना उस काल में होती है जहाँ अन्न पवित्र होता है।
8. तप का मूल मन है और मन का मूल अन्न है।
9. मन को पवित्र बनाने का नाम तप कहलाया गया है।
10. साधना कहते हैं मन और प्राण दोनों के मिलान को।
11. धर्म कहते हैं जो ईश्वर में हमें समाहित करा देता है।
12. यह जो हमारा शरीर है यह भी परमात्मा की देन है और यह परमात्मा ने त्याग और तपस्या के लिए दिया है। शान्ति के लिए परमात्मा ने दिया है कि इससे तुम आत्मा का उत्थान करो।
13. आत्मा का जो भोजन है वह नेत्रों से प्राप्त होता है, जो घ्राण के द्वारा प्राप्त होता है, जो श्रोत्रों के द्वारा प्राप्त होता है।
14. मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ये मन की ही धाराएँ हैं।
15. 'ओ३म्' के शस्त्र को लेकर के अच्छाइयों को लाना बहुत अनिवार्य है।
16. मानव की प्रत्येक इन्द्रिय 'ओ३म्' रूपी धागे से पिरोई हुई होनी चाहिए।
17. जीवन में अध्ययनशील बनें।
18. हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए प्राण से यह जो श्वास की गति है इसके द्वारा प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या जो कि उस मनन को श्रवण करना चाहिए।
19. मेरे प्यारे! देखो बुद्धि से दृष्टिपात करता है, मेधावी से उसे प्रयोग में लाना है, ऋतम्भरा से मौन हो जाता है और प्रज्ञा में बेटा! देखो वह परमात्मा का दर्शन करता है।
20. सबसे प्रथम जो दान है वह याग करना है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएं

प्रिय अरनव त्यागी

श्री विनोद कुमार त्यागी जी निवासी प्रहलाद गढ़ी, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश (मूल निवासी ग्राम सोहञ्जनी, मुजफ्फरनगर) ने अपने चिरन्जीव सुपौत्र अरनव, सुपुत्र श्रीमति पिन्की व श्री मोहित त्यागी के जन्मदिवस के शुभावसर दिनाँक 22 फरवरी, 2015 के उपलक्ष्य में 1100 रु. का सात्त्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए प्रदान किया है जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

त्यागी जी पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के परिवार सहित अनन्य भक्त हैं और प्रतिदिन अग्निहोत्र करते हुए उनके साहित्य का अध्ययन करने में संलग्न हैं। जिससे वैदिक परम्परा को जीवन में अपनाते हुए अपने को परिवार सहित ऊर्ध्वा गति में निरन्तर ले जा रहे हैं। जनकल्याण के कार्य को गति प्रदान करने के उद्देश्य से अपनी आहुति अनमोल साहित्य के प्रकाशन में प्रदान की है।

सुपौत्र के जन्मदिवस की शुभकामनाएँ प्रदान करते हुए समस्त परिवार को दीर्घ आयु, सुख, शान्ति एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिये समिति परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

वियोग

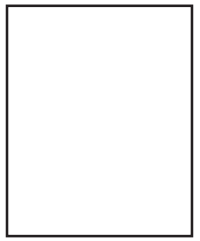

श्री विवेक त्यागी

परमपिता परमात्मा की सृष्टि जो कि परमाणुओं के संघात से निरन्तर परिवर्तनशील है उसी क्रम में प्रिय विवेक त्यागी जी निवासी अशोक कालोनी, अल्कापुरी, हापुड, उ.प्र. ने भी अपने नश्वर शरीर का परिवर्तन कर लिया और 11 फरवरी, 2015 को हम सभी को इस मृत्यु मण्डल में छोड़कर प्रभु के निश्चय किए हुए संविधान के अनुसार उनकी आत्मा अपनी भावी यात्रा में संलग्न हो गई। सृष्टि की इस अद्भुत रचना को प्रत्येक प्राणी दृष्टिपात कर रहा है और उसमें अपना जीवन व्यतीत भी कर रहा है परन्तु उसके गहनतम रहस्य को समझने में अपने को असमर्थ पाता है। परम्परा से ही मानव इस रहस्य को जानने के लिए प्रयत्नशील रहा है परन्तु योगी ही इस विषय में वेदों के ज्ञान से मानव का मार्ग दर्शन कर पाये हैं जिससे कि साधारण प्राणी अपने को सांत्वना को प्राप्त होता रहा है।

प्रिय विवेक बाल्यकाल से ही वैदिक परम्परा के अनुसार अपने पिता जी स्व. श्री रूपकिशोर त्यागी जी की छत्र-छाया में अपने जीवन को ऊर्ध्वगति में ले जाते रहे। श्री त्यागी जी पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के परिवार सहित अनन्य भक्त थे और अपने गृह पर ब्रह्म पारायण यागों का आयोजन पूज्य गुरुदेव के संरक्षण में प्रायः कराते थे। पूज्यपाद गुरुदेव के ब्रह्मलीन हो जाने के पश्चात् त्यागी जी ने यज्ञों का प्रचार और साहित्य को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य बड़ी तन्मयता से जीवन-पर्यन्त किया और उस कार्य में प्रिय विवेक अपने पिता श्री के संग तन-मन-धन से निरन्तर संलग्न रहे। त्यागी जी ने हापुड़ में चारों वेदों के सार्वजनिक ब्रह्म पारायण यागों को सम्पन्न करा करके आस-पास के क्षेत्र में ब्रह्म-पारायण यागों की ज्योति को जागृत करने में सहयोग देकर साकार रूप में परिवर्तित करने का सौभाग्य प्राप्त किया।

पिता श्री के याग करते-करते अकस्मात शरीर त्यागने के पश्चात् श्री विवेक त्यागी जी ने अपने कर्त्तव्यों व आदर्शों को निरन्तर ऊर्ध्वागति में ले जाने के लिए अपने परिवार सहित गति को बल दिया और अपने गृह में ब्रह्म पारायण याज्ञों का जन्मदिवस व उत्सवों पर आयोजन काफी लम्बे समय से आयोजित करते चले आ रहे थे। इस कार्य में उनकी माता श्री का विशेष सहयोग एवम् आशीर्वाद बराबर प्राप्त रहा जो कि स्वयं गौ सेवा से निरन्तर दुग्ध व धृत को गृह पर ही उपलब्ध रखती हैं। माता जी यज्ञों से विशेष प्रेम रखती हैं और जहाँ पर भी आस-पास में, बरनावा व हरिद्वार इत्यादि में सार्वजनिक ब्रह्म पारायण याग आयोजित होते हैं वहाँ पर सामवेद की वेदी पर यजमान के रूप में अपने जीवन को ऊर्ध्वा में ले जाने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं।

प्रिय विवेक ने हापुड़ में और आस-पास के क्षेत्र में सार्वजनिक यज्ञों का अनेक बार आयोजन किया और अन्त में 19 दिसम्बर, 2014 से 21 दिसम्बर, 2014 तक यजुर्वेद ब्रह्म पारायण याग का सार्वजनिक आयोजन हापुड़ में आयोजित किया जिसकी भव्यता, व्यवस्था व स्वरूप की सभी क्षेत्रवासियों ने मुक्त कण्ठ से सराहना की। विवेक नाम को समाज के समक्ष साक्षात करते हुए अपने व्यवहार व क्रियाकलापों से वह पवित्र आत्मा युवा पीढ़ी के समक्ष विशेष रूप में एक वैदिक परम्परा का आदर्श अपने जीवन के अन्तिम क्रियाकलापों के रूप में दर्शाते हुए—अपनी माता श्री के संग स्वयं चारों वेदों का याग अपने गृह में प्रतिदिन दैनिक याग के पश्चात् कई बार पूर्ण करते हुए, परमपिता परमात्मा की शरण में विचरण कर गई।

प्रभु से यह विनम्र प्रार्थना करते हैं कि संतप्त परिवार को इस विरह को सहन करने की शक्ति प्रदान करें और ऐसी पवित्र आत्मायें इस संसार में वैदिक परम्परा को अपनाने और प्रचार, प्रसार के लिए निरन्तर आती रहें।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पंच-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेध-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 6)	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 7)	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 8)	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 9)	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 10)	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 11)	80.00
63.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 12)	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएं	50.00
65.	प्रभु दर्शन	50.00
66.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 13)	80.00
67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हे मानव! तू अपने जीवन को महान् और सुन्दर बना। जीवन को महान् और सुन्दर बनाने के लिए वेद ने घोषणा की है। वेद अमानवता की घोषणा नहीं करता। **वेद तो मानवता की घोषणा करता है। विचार यह है कि आज हम मानव बनें।** क्योंकि वेद का ऋषि यह कहता है "मन वाचः प्रवे यौनस्तम् योनप्रवः मनुवाचः अस्वति देवः" ऋषि कहते हैं मानव शरीर न मानव है और न आत्मा है। **यह जो शरीर प्रभु ने दिया है, यह उस प्रभु की धरोहर है अथवा देन है जिसके ऊपर हमें विचारना है।** परन्तु रहा यह वाक् यह हमारा जो मानव शरीर है यह योनिज शरीर है। परन्तु **मानव को मानव बनने के लिए कहा है।** मुनिवरो! शरीर के आकार से ही मानव नहीं बनता है। ऋषि-जन कहते हैं कि मानव का यह शरीर है परन्तु इस शरीर से ही मानव नहीं कहलाया जाता। **"मानव वह होता है जो मननशील होता है।"** जो प्रभु के राष्ट्र में मनन करता हैं क्या वस्तु मनन करता है? और ज्ञान और विज्ञान के मनन करने में उस दिव्य महान् प्रभु के आनन्दमय स्वरूप को दृष्टिपात करता है।"

वर्ष 43 : अंक : 511
अप्रैल 2015

मूल्य :
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पञ्जी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 41030481

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2015-17
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2015-2017
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-04-2015
Published on 5th day of the same month

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-04-2015
Published on 5th day of the same month